© 2017 IJSRST | Volume 3 | Issue 7 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X
Themed Section: Science and Technology

प्राचीन भारत में कृषि : एक अध्ययन

डॉ0 जय प्रकाश उपाध्याय
(स0अ0)
पू0 मा0 वि0 शुकुलपुर, मांडा,
इलाहाबाद

प्रस्तावना–

''जब तुम, मुझे पैरों से रौंदते हो
तथा हल के फाल से विदीर्ण करते हो
धन–धान्य बनकर मातृ–रूपा हो जाती हूँ।''

भारत एक कृषि प्रधान देश रहा है। यहाँ की अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार कृषि हीं रही है। प्राचीन भारत की भौगोलिक बनावट कृषि और कृषि कार्यों के अनुकूल रही है। हिमालय से उद्‌भूत गंगा, सिन्धु और ब्रह्मपुत्र की घाटियों के विस्तृत मैदान, मानसूनी हवाओं द्वारा बरसायें गये प्रभूत जल के कारण भरपूर आर्द्रता और मिट्‌टी की सहज उर्वरता के कारण उत्तरी भारत के मैदानी भाग तो कृषि के अत्यन्त अनुकूल थे हीं, मालवा के मैदान, नर्मदा और ताप्ती के दुकूल एवं महानदी, कृष्णा तथा गोदावरी के मैदान भी उनसे बहुत पीछे नहीं थे।[1]

भारत में पाषाण युग में कृषि का विकास कितना और किस प्रकार हुआ था इसकी संप्रति कोई जानकारी नहीं है। किन्तु सिंधु नदी के काँठे के पुरावशेषों के उत्खनन के इस बात के प्रचुर प्रमाण मिले हैं कि आज से पाँच हजार वर्ष पूर्व कृषि उन्नत अवस्था में थी और लोग राजस्व अनाज के रूप में चुकाते थे, ऐसा अनुमान पुरातत्वविद् मोहनजोदड़ों में मिले बड़े–बड़े कोठरों के आधार पर करते हैं। वहाँ से उत्खनन में मिले गेहूँ और जौ के नमूनों से उस प्रदेश में उन दिनों इनके बोये जाने का प्रमाण मिलता है। वहाँ से मिले गेहूँ के दाने ट्रिटिकम कंपैक्टम (ज्तपजपबनउ ब्वउचंबजनउ) अथवा ट्रिटिकम स्फीरोकोकम (ज्तपजपबनउ ैचींमवबवबनउ) जाति के हैं। इन दोनों ही जाति के गेहूँ की खेती आज भी पंजाब में होती है। यहाँ से मिला जौ हार्डियम बलगेयर (ींतपकमनउ टनसहंतम) जाति का है। इसी जाति के जौ मिस्र के पिरामिडों में भी मिलते हैं। कपास की खेती के लिए सिंध की आज भी ख्याति है, उन दिनों भी प्रचुर मात्रा में कपास की पैदावार इन क्षेत्रों में होती थी। आर्य कृषि कार्य से पूर्णतया परिचित थे, यह वैदिक साहित्य से स्पष्ट परिलक्षित होता है। ऋग्वेद और अथर्ववेद में कृषि संबंधी अनेक ऋचाएँ हैं जिनमें कृषि संबंधी उपकरणों का उल्लेख तथा कृषि विधा का परिचय मिलता है। ऋग्वेद में क्षेत्रपति, सीता और शुनासीर को उल्लेखित कर रची गई एक ऋचा (4.57–8) है, जिससे वैदिक आर्यों के कृषि विषयक ज्ञान का बोध होता है–

शुनं वाहाः शुनं नरः शुनं कृषतु लागलम्।
शुनं वरत्रा बध्यंतां शुनमष्ट्रामुदिगय।।
शुनासीराविभां वाचं जुषेथां यद् दिविचक्रयुः पयः।
तेन मामुप सिंचतं।
अर्वाची सभुगे भव सीते वंदामहे त्वा।
यथा नः सुभगाससि यथा नः सुफलाससि।।

इन्द्रः सीतां नि गृहणातु तां पूषानु यच्छत।
सा नः पयस्वती दुहामुत्तरामुत्तरां समाम्।।
शुनं नः फाला वि कृषन्तु भूमिं।।
शुनं कीनाशा अभियन्तु वाहैः।।
शुनं पर्जन्यो मधुना पयोभिः।
शुनासीरा शुनमस्मासु धत्तम्[2]

एक अन्य ऋचा से प्रकट होता है कि उस समय जौ, हल, से जुताई करके फसल उपजाया जाता था–

एवं वृकेणश्विना वपन्तेषं
दुहंता मनुषाय दस्त्रा।
अभिदस्युं वकुरेणा धमन्तोरू
ज्योतिश्चक्रथुरार्याय।।

अथर्ववेद से ज्ञात होता है कि जौ, धान, दाल और तिल तत्कालीन मुख्य शस्य (फसल) थे–

व्रहीमतं यव मत्त मथो
माषमर्थो विलम्।
एष वां भागो निहितो रन्नधेयाय
दन्तौ माहिसिष्टं पितरं मातरंच।।[3]

अथर्ववेद में खाद का भी संकेत मिलता है जिससे प्रकट होता है कि अधिक अन्न पैदा करने के लिए लोग खाद का भी उपभोग करते थे–

संजग्माना अविभ्युषीरस्मिन्
गोष्ठं करिषिणी।
बिभ्रंती सोभ्यं।
मध्वनमीवा उपेतन।।[4]

ऋग्वेद काल के प्रारंभिक चरणों में आर्यों का मुख्य व्यवसाय पशुपालन था।[5] रामशरण शर्मा का मत है कि ऋग्वैदिक काल में आर्यों का आर्थिक स्रोत या आय का मुख्य साधन पशु पालन हीं था। कृषि इस काल में आय का गौण साधन था। दान में भी ऋग्वैदिक काल में आर्य पशु ही देते थे, भूमिदान नहीं करते थे।

उत्तर वैदिक काल में कृषि का विकास पूर्ण रूप से हो चुका था। अथर्ववेद में छः से बारह बैल को एक साथ हल में जोतकर जुताई करने का वर्णन मिलता है।[6] ऊपर वर्णित अथर्ववेद में खाद का वर्णन मिलता है। यजुर्वेद में यह वर्णित है कि जौ जाड़े में बोया जाता था और ग्रीष्म ऋतु में काटा जाता था और चावल वर्षा में बोया जाता था और पतझड़ में काटा जाता था।[7] उत्तर वैदिक काल में लोहे की कुल्हाड़ी का प्रयोग जंगलों को साफ करके खेती के लिए जमीन तैयार करने में होने लगा। लगभग 700 ई0पू0 में सबसे पहले लोहे के फाल का प्रयोग होने लगा। गया जिले के सोनपुर नामक स्थान से लगभग 700 ई0पू0 के समय के

धान के जले हुए दाने मिले हैं।[8] अथर्ववेद में जौ, व्रीहि, चावल, तिल, उड़द, ईख, श्यामाक का उल्लेख है। गेहूँ का उल्लेख ऋग्वेद को छोड़कर सभी संहिताओं में है।[9]

उत्तरवैदिक काल में कृषि का बहुत विस्तार हुआ। इसका प्रमुख कारण इस काल के अंत में लोहे के फाल का प्रयोग होना, फसल काटने के कारण लोहे के दरांती का प्रयोग। वैदिक साहित्य में ऐसा कोई साक्ष्य नहीं मिलता जिससे प्रमाणित हो सके कि कृषि कार्य में दासों को लगाया जाता था। परिवार के लोग हीं खेती का कार्य करते थे।

सूत्र साहित्य में बैलों को हल जोतने, बीज बोने और सीता (कूँड़) को पूजने के लिए अलग–अलग धार्मिक क्रियाएँ करने का विधान है। क्षेत्रपति के लिए एक अलग यज्ञ दिया गया है। जब फसल तैयार हो जाती थी तो किसान आग्रायण (नवसस्येष्टि) यज्ञ करता था। ये सभी धार्मिक क्रियाएँ सिद्ध करती हैं कि इस समय लोगों के जीवन में कृषि का बहुत महत्व था। समाज के चारो वर्ण किसी न किसी मात्रा में कृषि कर्मों में लगे हुए थे और धर्मशास्त्रों की व्यवस्थाओं के होते हुए भी कृषि कार्य वैश्य वर्ण तक हीं सीमित नहीं थे। महाभारत[10] और रामायण[11] में भी कृषि और पशुपालन दोनों महत्वपूर्ण व्यवसाय प्रतीत होते हैं।

कौटिल्य ने चावल की दो नई किस्मों[12] दारक और वरक का उल्लेख किया है। पतंजलि ने एक तृण धान्य गवी धुक[13] का उल्लेख किया है। इस काल में मसालों में सफेद सरसों और धनिया का भी प्रयोग होने लगा।[14] रामायण में हमें चने[15] का भी उल्लेख मिलता है। इस काल में लोग कैथ[16] (कपित्थ) का फल भी खाते थे।

कुषाण काल में चरक–संहिता में अच्छे चावल की 15 किस्मों[17] में कलम किस्म का भी उल्लेख मिलता है। सुश्रुत संहिता में गेहूँ की दो किस्मों मधूलिका और नंदामुखी[18] का उल्लेख है। डायोडोरस के अनुसार भारत में पर्याप्त खाद्यान्न उपजाएँ जाते थे क्योंकि भूमि उपजाऊ थी और नदियों से सिंचाई की जाती थी।[19]

300 ई0 से 600 ई0 में भी कृषि कार्य और कृषि का महत्व काफी थी। कालिदास के अनुसार राष्ट्रीय आर्थिक विकास में कृषि और पशुपालन का बहुत महत्व है।[20] इस काल में कुछ व्यक्तियों ने राज्य से परती भूमि पर खेती करने की अनुमति माँगी थी, क्योंकि उसका मूल्य कम होगा और भूराजस्व भी उस पर कम लिया जाता होगा।[21] इस काल में देश के कुछ भागों में तीन फसलें उगाई जाती थीं। ग्रीष्म ऋतु में बोई फसलें श्रावण (सावन) में पक जाती थीं। जो फसलें पतझड़ में बोई जाती थीं वे बसन्त में काट ली जाती थीं, और जो बसन्त में बोई जाती थीं वे चैत्र या वैशाख में काट ली जाती थीं।[22] उत्तर भारत में नदियों से अधिकतर सिंचाई होती थी। मानसून की वर्षा से भी खेती के लिए पर्याप्त पानी मिल जाता था। परन्तु मध्य भारत और पश्चिमी भारत में नदियों से सिंचाई संभव नहीं थी। अतः सरकार ने और जनता ने अनेक तालाब, झीलें और कुँए खुदवाये। ऐसा लगता है कि सिंचाई के साधन अधिकतर प्रजा हीं बनवाती थी, परन्तु जहाँ आवश्यकता हुई सरकार भी आर्थिक सहायता देती थी, जैसे कि स्कन्दगुप्त ने सुदर्शन झील की मरम्मत कराई।[23]

लगभग 600 ई0 से 1200 ई0 में भी कृषि कार्य का बहुत महत्व था। शुक्र ने वार्ता के अंतर्गत साहूकारा, कृषि, व्यापार और पशुपालन को सम्मिलित किया है।[24] नौंवी और दसवीं शताब्दी के अरब लेखकों ने लिखा है कि भारत की भूमि बहुत उपजाऊ है और यहाँ अनाज और फल बड़ी मात्रा में होते हैं।[25] अभिधान रत्नमाला में भूमि का वर्गीकरण उपज के आधार पर–उपजाऊ (उर्वरा), ऊसर (इरिण), परती(खिल), रेगिस्तान (मरु) और अत्युत्तम

(मृत्सा या मृत्स्रा)।[26] इसी कोश में उन खेतों का उल्लेख है जिनमें अलग–अलग अनाज उपजाए जाते थे, जैसे कि–व्रीहि चावल, शालि चावल, कोदों, साठी चावल, मूँग, उड़द, तिल, अलसी, सन, जौ और विभिन्न प्रकार के साक।[27]

निष्कर्ष–

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्राचीन काल में कृषि कार्य का उत्तरोत्तर विकास होते गया और समय के साथ इसमें तकनीकि विकास हुआ। लोहे की खोज ने कृषि कार्य को अधिक फायदेमंद बनाया। लोहे के यंत्रों के आविष्कार से कृषि में अधिशेष उत्पादन होने लगा और कृषकों की स्थिति में व्यापक सुधार आने लगा। कृषि अधिशेष ने व्यापार को बढ़ावा दिया और साथ–हीं–साथ भूमि का महत्व बढ़ने लगा। भूमि दान में भी दिया जाने लगा। राजाओं और सरकार के आय का एक बड़ा साधन भूमि कर हो गया। प्राचीन भारत की कृषि व्यवस्था ने उस समय के लोगों के जीवन–यापन और आर्थिक–स्रोत के महत्वपूर्ण साधन का रुप लिया, जो अभी वर्तमान समय में भी है।

संदर्भ सूची–

1. उ0ना0 घोषाल, ए हिस्ट्री ऑफ इंडियन् पब्लिक लाइफ, जिल्द–2, पृ0–87 ।
2. ऋग्वेद (ऋचा–4.57.8)।
3. अथर्ववेद।
4. अथर्ववेद।
5. कृष्ण मोहन श्रीमाली–वैदिक साहित्य में प्रतिबिम्बित भारत–प्राचीन भारत का इतिहास–दि0 विश्व0 पृ0–123 ।
6. अथर्ववेद–6, 91, 1 ।
7. तैत्त0 सं0 4, 2 और 7; 2, 10 ।
8. रा0 श0 शर्मा मैटिरियल् कल्चर एण्ड सोशल फॉर्मेशन् इन् ऐंसियेण्ट इंडिया, पृ0–103 ।
9. ओम प्रकाश–फूड एंड ड्रिंक्स इन एंशियंट इंडिया, पृ0–9 ।
10. महाभारत–2, 5, 79; 2, 100, 45 ।
11. रामायण–2, 67, 12; 2, 100, 45 ।
12. कौटिल्य 2, 24, 16 ।
13. पतंजलि सूत्र 2, 3, 136 ।
14. कौटिल्य 2, 15, 21 ।
15. रामायण उत्तर 91, 20।
16. रामायण उत्तर 42, 33 ।
17. चरक, सूत्र 27, 7–8 ।
18. सुश्रुत, सूत्र 46, 21 ।
19. डायोडोरस 2, 36 ।
20. रघुवंश 16, 2 ।
21. वैन्यगुप्त का गुणयगढ़ दान पत्र–इंडियन हिस्टोरिकल क्वार्टरली 6, पृ0 53–56 ।
22. बृहत्संहिता, 8, 8–9 ।
23. फ्लीट पृ0 56 ।
24. शुक्रनीतिसार 1, 311–312 ।
25. इलियट और डाउसन 1, 15–16, 24, 27–28, 35, 37–40 ।
26. अभिधान रत्नमाला 2, 3–6; वैजयन्ती 1–24, 17–18 ।
27. अभिधान रत्नमाला 2, 7–9; वैजयन्ती 124, 19–20 ।